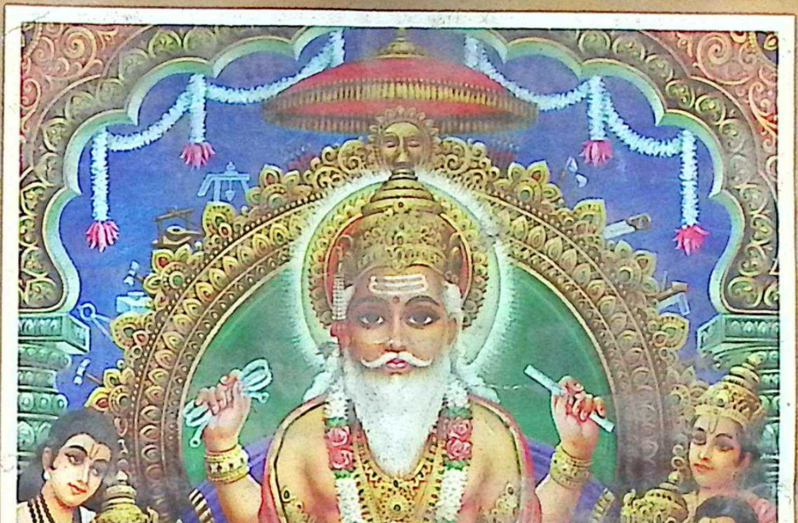

जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्यपीठ

वर्ष-३३ ५ दिसम्बर २०११ अंक-१०

भारत समाचार पत्र रजि. नं. ३३४५३/७९ पंजीकरण संख्या-जी.ए.एम.सी. ४५१ प्रत्येक मास की ५ वीं तारीख को अहमदाबाद पी.एस.ओ. पोस्टिंग एवं ३१-१२-२०११ तक मान्य

ॐ

आचार्य पीठ सन्देश

श्री मुख प्रस्तुति ....परम पूज्य महाराज श्री

ॐ श्री रां रामाय नमः ॥

सद्‌गुरू जगद्‌गुरू श्री रामानन्दाचार्याय नमः ॥

श्री रामाचार्याय नमः ॥

मानव। तेरा अस्तित्त्व क्या है ? तेरा संसार में जन्म किस लिये हुआ ? तेरी वास्तविकता क्या है ? कभी मन में सोचा है ? नहीं सोचा। सोचता भी कैसे ? भूल गया संसार में आके। इस पञ्चभौतिक शरीर की स्थिति ही क्या है। पञ्चतत्त्व के एकत्र होने पर बना और अलग होने पर नष्ट होगा। इन पञ्चतत्त्वों के प्रपञ्च में ही उलझ कर रह जाता है प्राणी। इस पाञ्चभौतिक शरीर के ५ शत्रु हैं जो प्राणी की उन्नति व अवनति का कारण हैं। काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह के वशीभूत तो हो जाता है किन्तु इन रोगों के इलाज हेतु सत्य, अहिंसा, संकल्प, त्याग, वैराग्य से दूर रहता है जिसके फलस्वरूप उसका सांसारिक एवं आध्यामिक दोनों का उत्थान नहीं हो पाता है।

वह अपने असली रूप को पहचानने में असफल हो जाता है। और इसी मायाजाल में फँसकर अपना सब कुछ लुटा देता है। इस नश्वर शरीर का तत्त्व क्या है ? किसकी शक्ति है इसमें ? किसके प्रकाश से प्रकाशमीन है यह ? इन सब बातों के चिन्तन से मनो मस्तिष्क में इक विचार आता है कि आइये कुछ खोज कीजिए। माता - पीता के सहयोग से अद्‌भूत यह सांसारिक काया नश्वर है किसी भी समय इसका अवसान हो सकता है किन्तु जानने योग्य बात यह है कि चेतना है क्या ? यह उसी परब्रह्म से उत्कीर्ण तेज है जो शरीर को शक्ति रूप में प्राप्त होता है और शरीर को चेतन्य करता है।

इसी के तेज पुञ्ज से प्रकाश प्रास होता है जो सम्पूर्ण-संसार का दर्शन करता है संसार में परमार्थ, धर्म, साहित्य एवं स्मृति चिह्न प्राणी को अमरत्त्व प्रदान करते हैं इनके क्षेत्र में अपना तन-मन-धन अर्पित करना ही मानव जन्म का उद्देश्य है।

शरीर भगवान का मन्दिर है

एक बार परम् पूज्य गुरूदेव पण्डित श्रीराम शर्मा आचार्य के पास साधु वेश में एक युवक आया और धर्म अध्यात्म की बाते करने लगा। बात करते समय उसके मुंह से अनायास ही निकल गया कि वह बाल ब्रह्मचारी है। गुरूदेव ने उस युवक के कृषकाय शरीर और निस्तेज चेहरे को देखकर समझ लिया कि इसने अपने शरीर के साथ बड़ा अन्याय किया है। गुरूदेव को उस पर दया आई और उसके क्रियाकलाप और दिनचर्या के बारे में पूछताछ की। उस युवक ने बताय कि इन्द्रियों के दमन के लिये वह व्रत उपवास करके शरीर को सुखाया है तथा संयम के लिये गांजा पीने की प्रवृति अपना रखी है तथा उग्र तप के नाम पर पंचाग्नि तप से शरीर को कृष ही नही कलुश भी बना लिया है ताकि और कोई युवा स्त्री आकर्षित न हो। गुरूदेव ने देखा आंखे गहरी बैठ चुकी थी। युवा अवस्था में ही वृद्धावस्था के लक्ष्ण दीखने लगे थे। गुरूदेव कहने लगे, "हे! बेटे शरीर तो भगवान का मन्दिर है इसके साथ इतना अत्याचार क्यों करते हो? परमात्मा ऐसे अस्वस्थ शरीर में कैसे रह सकेगा? शरीर को कभी न रोगी बनने दो न भोगी। इसको स्वस्थ रखने की जिम्मेदारी हमारी है। धार्मिक और आध्यात्मिकवादी कहलाने के लिये इतना कष्ट उठाना अत्याचार के समान है। इन्द्रियों को वस में मन से किया जाता है। जिसके लिये स्वाध्याय, संत्सग, चिंतन और मनन, ध्यान आवश्यक है। यह सुनकर युवक चौक पड़ा। उसने दमन को त्याग और वेश को धार्मिक होने का आधार मान रखा था। गुरूदेव कहने लगे यह शरीर भगवान का मन्दिर है जिसकी आत्म संयम और नियमितता द्वारा स्वास्थ्य की रक्षा करो, स्वस्थ शरीर में ही परमात्मा का निवास सम्भव है अस्वस्थ में नहीं। जैसे क्षतिग्रस्त घर में कोई भी रहने की जोखिम नही उठाता। वह युवक गुरूदेव के चरणों में गिर पड़ा और मार्ग प्रशस्त करने हेतु निवेदंन किया। पुज्य गुरूदेव ने उस सार्थक जीवन के निम्न सूत्र बतलाये:-

१. मानव जीवन का महत्व समझे :- गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरित मानस में मानव जीवन की महत्ता पर कई चौपाईयां लिखी है जैसे-

१. बड़े भाग मानुष तनु पावा, सुर दुर्लभ सब ग्रन्थनि गावा।

२. नर तन सम नही कवनेहु देही, जीव चराचर जांचत जेही।

३. नर तनु भव बारीधि कहुँ बेरो, सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो।

४. करणधार सद्गुरू दृढ़नावा, दुर्लभ साज सुलभ करि पावा।

दोहा :- जो न तरे भवसागर नर समाज असि पाय ।
सौ कृत निन्दक मन्द - मति आत्माहन गति जाय ॥

सौभाग्य से प्राप्त हुये मानव शरीर जो देवताओं को भी दुर्लभ है ऐसे मानव शरीर पर अनावश्यक दबाव देना पाप है। यह परमात्मा की कृति है इसका अपमान है। या यों कहे परमात्मा के मन्दिर को तोड़ने के समान पाप है। इसका सार्थक सद्उद्देश्य के लिये भगवान के राजकुमार बनकर सद्प्रवृत्तियों के विकास में उपयोग करना चाहिये।

२. शरीर माध्यम, धर्म खलुसाधनम् :- जिसे स्वस्थ, सुरक्षित, सुव्यवस्थित, सहज बनाये रखने की जिम्मेदारी हमारी है। ब्रह्ममुहुर्त में जागरण, शौच आदि से निवृत्ति, नियमित योग प्राणायाम् तथा नित्यकर्म करना चाहिये।

३. सात्विक्, ऋतुभक्, मितत्तक्, सितभुक् भोजन करना चाहिए। खाने के लिये न जीकर जीने के लिये खाये। भगवान बुद्ध लम्बे समय से निराहार तप कर रहे थे। उन्होने एक गीत सुना," वीणा के तार इतने ढ़ीले न करो कि आवाज न आये तथा अधिक भी मत कसो कि टूट जाये। इसलिये शरीर को भगवान का मन्दिर मानकर समुचित भोजन किया जाकर भगवान के कार्य में लगे रहना चाहिये। इसी में मनुष्य जीवन की सार्थकता है।

४. जल्दी सोवों, जल्दी उठो को अपनाओं, धनी स्वस्थ बन बुद्धिमान कहाओ :- नियमित दिनचर्या बनाकर तत्परता, तन्मयता और जागरूकता को जीवन का अंग बनने दे।

५. साधना, उपासना और स्वाध्याय को जीवन में अपनाये, **'भजन नही तो भोजन नही, स्वाध्याय नही तो शयन नही'** का संकल्प अपनाये। शिष्ट आचरण और मधुर वाणी का अभ्यास करे क्योंकि तुलसी मीठे वचन ते सुख उपजत चहुं ओर। इससे प्राणी मात्र ही नही परमात्मा भी प्रसन्न होते है।

६. निन्दा के बजाय प्रशंसा करने की आदत डालें क्योंकि प्रशंसा में सृजन की शक्ति होती है। प्रशंसा से सम्बन्धित व्यक्ति प्रोत्साहित होकर उन्नति की ओर अग्रसर होता है।

७. रात्रि में शयन से पूर्व आत्मनिरीक्षण कर आत्म शोधन और आत्म विकास की ओर चरण बढ़ाते चले।

तथा नियमित दैनिक डायरी का लेखन करें। इसमें दिनभर की अच्छी-बुरी घटनाओं का उल्लेख करें।

८. सुव्यवस्था और कर्त्तव्यबोध को कभी न भूलें।

९. लोकसेवा और परोपकार को जीवन में अपनाये। दूसरों से अपनी सेवा करने के बदाय दूसरों की सेवा करने में आनन्द की अनुभूति करें। कहा है –

तन पवित्र सेवा किये, धन पवित्र कर दान।
मन पवित्र हरि भजन कर, होत त्रिविध कल्याण॥

१०. श्रद्धा और निष्ठा को सतत् बढ़ने दे, यही परमात्मा से मिलने का एकमात्र मार्ग है।

११. मन को भटकने न दे। उसे अपना अनुवर्ति और अनुयायी बनाये क्योंकि कहा है ''**मनएव मनुष्याणाम् बन्ध कारण मोक्षयों**। इसलिये मन को वश में रखों। उसके लिये हर समय भगवान का और पुण्य परमार्थ का चिंतन चलता रहे जैसे – एक सेठ के पास एक भूत आदमी बनकर आया और कहने लगा मुझे कोई काम दो। सेठ ने कहा-एक दिन की कितनी मजदूरी लोगे ? भूत बोला- मुझे मजदूरी नही काम चाहिये। मुझे काम देते रहना मैं काम करता रहूंगा। यदि खाली रहा तो मैं तुझे खा जाऊंगा। सेठ ने उसे उसकी शर्त पर नौकर रख लिया और काम बताने लगा। भूत सारे काम जल्दी निपटाकर आकर कहने लगता काम बताओ, नही तो खाऊं। सेठ के सभी काम हो गये। कोई काम नही बचा। अब क्या करे ? भूत से बचने के लिये अपने गुरूदेव के पास गया और अपनी समस्या बताई। गुरूदेव ने उसे एक लम्बा बांस गाड़कर उसपर बार-बार चढ़ने-उतरने का आदेश दे दिया। बेचारा भूत बांस पर चढ़-उतर कर थककर सेठ के चरणों में आ गिरा। उसी प्रकार मन को भी राम नाम के बांस पर चढने-उतरने के अभ्यास में लगाये रखना चाहिये।

कहा है-

श्वास-श्वास में हरि जपो वृथा श्वास मत खोय।
न जाने इस श्वास को आवन होय न होय॥

१२. अपने ईष्ट का ध्यान और गुरू का सम्मान कभी न भूले इसी में हमारा उद्धार है और मनुष्य जीवन की सार्थकता है। अतः दोहा :-

जो न तरे भवसागर नर समाज असि पाय।
सौ कृत निन्दक मन्द मति आत्माहन गति जाय॥

अन्नकूट परिव्राजकः-**कंचन केदारदास वैष्णव**

२७ अक्टूबर २०११

हमीगढ़ मो. - ९४६१५३२२५७

"श्रीराम"

"मोटेरा गुजरात स्टेडियम साबरमती स्थित श्री संतसेवा - आश्रम हनुमान टेकरी में भव्य वैष्णवाराधन"

विश्व विख्यात साबरमती मोटेरा गुजरात स्टेडियम के पीछे संतसेवा आश्रम श्री हनुमान टेकरी में परम सहृदयी संत सेवी स्व समप्रदाय निष्ठ परम विवेकी महंत श्री प्रेमदास जी महाराज के द्वारा साकेतवासी श्री महंत १००८ सद्‌गरूदेव श्री महंत सीतारामदास जी महाराज की ४३वीं पुण्यतिथी अत्यन्त भव्यता के साथ ता. १९/१०/११ बुधवार को मनाई गई ।

इस भव्य समारोह में विख्यात कथाकार सुमधुरवक्ता श्री नंदकिशोर जी शास्त्री के मधुर कंठ से सामुहिक सुन्दर काण्ड का पाठ हुआ । तत् पश्चात् साकेतवासी श्री सीतारामदास जी महाराज की समाधी पर पुष्पजंली अपर्ण के पश्चात् भव्य संत सम्मेलन का आयोजन हुआ । जिस में विद्वान वक्ताओ ने धर्म एवं श्री रामानंद सम्प्रदाय पर प्रकाश डाला ।

इस भव्य समारोह में सर्व श्री आखिल भारतीय दिगम्बर अनी अखाड़ा के श्री महंत महामण्डलेश्वर स्वामी श्री केशवदास जी महाराज शामला जी, परम गौसंत सेवी स्थान के अध्ययी श्री महंत दीलीप दास जी महाराज जगदीश मंदिर अहमदाबाद निमोर्ही अनी के श्री राजेन्द्र दास जी महाराज, महामण्डलेश्वर स्वामी श्री शिवरामदास जी महाराज मंमं रामावतार दास जी (रत्न) वेदान्त पीठ, दीगम्बर तडाधीश श्री म. मोहनदास जी महाराज साईधाम श्री मं. अवधेशदास जी महाराज मं. माउन्ट आबु, श्री मं. घनश्यामदास जी महाराज, श्री मं. संतदास जी महाराज गिरनारी बापू , श्री मं. गोमतीदास जी महाराज शेरथा श्री मं. जगन्नाथ दास जी महाराज

घाट को पर मुंबई श्री रामदास जी महाराज अधेरी श्री मं. नारायण दास जी महाराज, अंधेरी श्री मं. द्वारका दास जी आबु । मं. मं. मुरलीदास जी आबु । मं. श्री देव कुमार दास जी रायपुर राजस्थान श्री मधुसूधन दास जी वावोल, तथा श्री रामानंद विरल वैष्णव मंडल के करीब सभी स्थानीय सदस्यों आदि के उपरान्त सैकड़ो संत महंल महामण्डलेश्वर नागा अतीत, त्यागी, एवं अभ्यागत संतो ने भाग लिया । ज्ञातव्य है, श्री संत सेवी प्रेमदास जी महाराज प्रतिवर्ष दो समय इसी प्रकार बृहद आयोजन करते है, आपके आयोजन में हमेशा ही विशाल संत महंतो एवं भक्तों का आगमन होता है । संत महंतों का उदारता पूर्ण व्यवहार किया जाता है । श्री महंत प्रेमदास जी महाराज अत्यन्त विनम्रता के साथ "यथनामतथागुण" की उक्ति को चित्रार्थ करते हुए सभी का प्रेम से स्वागत सत्कार करते है विख्यात् स्टेडियम के अत्यन्त्य निकट होने के कारण बड़े-बड़े सरकारी अधिकारी राजनेता, क्रिकेट ऐसोसियेयशन के पदाधिकारी गण भी आपके कार्यक्रम में उपस्थित होते है सभी पार्टीयों के नेताओं एवं अधिकारीओ को एवं व्योपारी गण सेठ साहुकारों पर आपका अच्छा प्रभाव है । आप श्री रामानंद सम्प्रदाय के स्वाभिमानी संत सेवी त्यागी महाराज है ।

इस भव्य समारोह में भजन, कीर्तन, सत्संग श्रधांजली पाठ, भोग, आदि के साथ भंव्यतम वैष्णवाराधन हुआ जिसकी संपूर्ण व्यवस्था श्री महंत प्रेमदास जी महाराज के निदेर्शानुसार श्री महंत स्वामी श्री शिवरामदास जी महाराज एवं श्री मोहनदास जी महाराज द्वारा सम्पन्न हुई । अस्तु"

लि.

संवाददाता

विवेकरक्षा करुणैव केली

(गतांक से चालु)

धर्माचार्यों- धर्म गुरुओं में भी कोई सीमा नहीं होनी चाहिए। वाड़ाओं में, ग्रूपों में, सम्प्रदायों में, ग्रथित महापुरुष राष्ट्र के लिए उपयोगी नहीं है। आकाशवत् *'लोचन नलिन विशाल'* कूपमंडूक नहीं। धर्म हमें सिखाता है कि क्या खाना चाहिए? क्या नहीं खाना चाहिए? दूध, रोटी, फल, तरकारी, (सब्जी) खाई जा सकती है-लांच-रिश्वत नहीं ! ऑफिस के कर्मचारियों को यह सीखना चाहिए। जहाँ देखो वहाँ इस संसार में भ्रष्टाचार व्याप्त है। जो इससे बचे हैं, उन्हें मेरा वंदन है, मेरे व्यासपीठ से! जो इसमें पड़े हैं उनके लिए उपनिषद् का यह वचन समझ लेना चाहिए-हंसाचार। रिश्वत नहीं खानी चाहिए, दूध पीना चाहिए, फल का रस पीना चाहिए। किन्तु दूसरे का खून नहीं। आज पानी छानकर पीते हैं, और रक्त सीधे पीते हैं, ऐसे भी व्यक्ति इस संसार में हैं। मार्ग से जा रहे हो रास्ते में चींटी देख कर कूदोगे कि कहीं पैर के नीचे चींटी न आ जाय या मर न जाय और मनुष्य की हत्या करने में हिचकते नहीं। हम-तुम नकली मुखौटा लगाये हुए हैं। अब परदा हटाकर खुल जाओ। राष्ट्र कभी माफ नहीं करेगा, धर्म माफ नहीं करेगा, ऋषि माफ नहीं करेंगे। तुम्हारा और हमारा आचार हंस जैसा होना चाहिए। सार-असार को अलग करो।

गाली-गलौज से भरा हुआ महात्मा गाँधी पर किसी ने पत्र लिखा। महादेव भाई देसाई बापू से पूछने लगे कि इस पत्र से क्या लेना है? उस पत्र को पहले फाड़ दिया और उसमें जो आलपीन लगी थी, उसे निकाल ली। बापू ने कहा कि जो लेना था ले लिया, बाकी फाड दिया-हंसाचार।

संसार में रहते हुए जिसका आचार ऐसा होगा वह साधु के समान है, वही सच्चा साधु है। वेश के साधु को हमारे देश ने वंदन किया है, यह एक समग्र व्यवस्था है, किन्तु आचार युक्त साधु परम वंदनीय है। वृत्ति का साधु परम वंदनीय है, जिसमें वृत्ति का निर्माण हुआ वह आचार्य है। वल्लभाचार्य, रामानुजाचार्य, निम्बार्काचार्य का दूसरा अवतार माना जायेगा, जिसमें आचार का निर्माण हुआ। रामचरित मानस इन समस्त वचनों पर मुहर लगाता है।

उपनिषद् की कथा नहीं की जा सकती। यह तो गुरु के समीप बैठकर ज्ञान प्राप्त करना होता है। उप + निषत् का अर्थ है समीप बैठना। शब्दों को समझाने

का कोई उपाय न होने से श्रीराम कथा के माध्यम से गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी ने प्रकट उपनिषद् लिखा। प्रायः सभी उपनिषद् रामचरित मानस में दृष्टिगोचर होते है। मैं एक संन्यास आश्रम में था, वहाँ एक स्वामी जी मांडव्य उपनिषद् पर चर्चा कर कर रहे थे, मुझे उसमें रामचरित मानस दिखाई देता था। मैंने कहा, हमारा मानस उपनिषद् कोई कम नहीं। गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी ने सरलता से आपकी बात का मानस में वर्णन किया है—

ब्रह्म जो व्यापक बिरज अज, अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होई नर, जाहि न जानत बेद॥

(बाल० दो० ५०)

इसीलिए रामचरित मानस विश्व की अंतिम व्यवस्था है। इसके बाद विश्व को अन्य किसी तथ्य की आवश्यकता होगी तो दूसरा अवतरण होगा। शेष तो यह अंतिम व्यवस्था है।

मैं मानस कह रहा हूँ इसलिए नहीं, आप अपनी बुद्धि से विचार करें, हमारे कथन को ऐसे ही स्वीकार मत करो।

तो उपनिषद् को गोस्वामी जी ने मानस में चरितार्थ किया है—लीला या घटना द्वारा उपनिषद् को समझाया जा सकता। यह तो गुरु के समीप बैठकर जाना जा सकता है। कुछ कहना चाहिए? किस प्रकार कहना चाहिए? गो० स्वामी श्री तुलसीदास जी ने कहा है—

'नाना पुराण निगमागम सम्मतं यद्।
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि॥' (बाल० १४)

समस्त शास्त्रों की सम्मति से युक्ति शास्त्र की रचना करके दिव्य शास्त्र का जगत को प्रदान किया —

'विवेक रक्षा, करुणैव केलीः, आनंदमाला।
एकासन गुहायाम्, अकल्पित भिक्षासि हंसाचारः॥'

卐 卐 卐

क्वौ रामाय ददौ, रामः सर्वेभ्योः भूतेभ्योः
तदाविद्येत निर्वाणं, अनुशासनं, वेदानुशासनम्। -इति उपनिषद्

ऋषि कहते हैं कि यह तत्त्व राम से प्रकट हुआ है। अन्त में रक्त नामक ऋषि

के पास गया, उन्होंने राम को दिया और राम ने समस्त जीव तक पहुँचाया।

जिस प्रकार दीप प्रज्वलन, यह सूर्य का ही तत्त्व है। किन्तु सूर्य दीपक को अपना प्रकाश देकर, दीपक द्वारा अपनी आरती उतरवाता है।

उत्तरकाण्ड में भगवान श्रीराम जी ने पुरजनों के समक्ष कुछ वचन कहे हैं— छोटे-छोटे वचन, उपनिषद्कार सूत्रों में ही कहते हैं— समझना हो तो समझ लो।

ऐसा ही सभा रावण ने भी की थी और भगवान श्रीराम का अनुकरण करते हुए 'अनुशासन' शब्द का उपयोग किया था।

श्रीराम ने अयोध्यावासियों से जो कुछ कहा— वह समस्त भूत-प्राणियों के लिए उपदेश है— *'सर्वेभ्यो भूतभ्यो'* अयोध्या-जहाँ कोई अवधि नहीं है, सीमा नहीं है। बहुमूल्य बातें श्रीराम जी ने कही हैं। कितना प्रेम होगा? इस जगत् को पुरी कहा है। पुरी में रहनेवाले तुम और मैं—जीवमात्र के लिए यह सन्देश है, सुनें—

सोई सेवक प्रियतम मम सोई।
मम अनुसासन मानै जोई॥ (उत्तर० चौ० ४२-५)

प्रभु श्रीराम ने कहा कि वह सेवक मेरा प्रियतम है, जो मेरा अनुशासन मानता है। यह बहुत ही क्रान्तिकारी शब्द है—मैं और तुम प्रभु को प्रियतम कहें, यह स्वभाविक है, किन्तु आज प्रभु स्वयं कहते हैं कि वह सेवक मेरा प्रियतम है। इतना सम्मान श्रीराम जी के सिवाय विश्व में कौन देगा?

प्रिय, प्रियवर, प्रियतम-इसके बाद कोई शब्द नहीं है। अंतिम सम्बोधन और सम्बंध है। हम कहते हैं—ठाकुर मेरे प्रियतम! किन्तु आज प्रभु ने हद कर दी, सेवक और प्रियतम! प्रीतम तो मालिक होता है—किन्तु रामायण क्रान्तिकारी ग्रंथ है। वह सेवक मेरा प्रियतम है, उसे मैं प्रेम करता हूँ-जो मेरे अुनशासन को स्वीकार करे। अद्भुत सम्मान दिया है, प्रभु कहते हैं, मैं संक्षेप में कहता हूँ—

बहुत कहउँ का कथा बढ़ाई,
एहि आचरन बस्य मैं भाई। (उत्तर० ४५-४)

ऐसा आचरण कहाँ होगा? जिसके मैं आधीन हूँगा। भगवान के प्रियपात्र उनके सेवक-प्रभु उसके प्रेमी-प्रेमी-प्रियतम के आधीनस्थ। अब गंभीरता से विचार करें।

कोई भी व्यक्ति बहुत उदार होगा तो इन सब रहस्यों को खोलेगा, किन्तु आधीन

नहीं होगा। ठाकुर बहुत उदार हैं। यदि हमें ईश्वर को वश में करना हो तो वैसा आचरण करें—

'बैर न बिग्रह आस न त्रासा,
सुखमय ताहि सदा सब आसा।
अनारंभ, अनिकेत, अमानी,
अनध, अरोष दच्छ विज्ञानी॥' (उ० ४५-५)

(१) वैर : किसी के साथ बैर न करो। दूसरे के साथ बैर करना, यह अंत में अपने साथ ही बैर करने के बराबर है, कारण-यहाँ अन्य कोई तो है ही नहीं। तुम शाप दो तो तुम्हें और आशीर्वाद दो तो वह भी अपने को।

पति-पत्नी को आशीर्वाद दे कि अखण्ड सौभाग्यवती भव! तो अन्त में उसे ही दीर्घायु प्राप्त होती है।

मनुष्य-मनुष्य के साथ मनुष्य वस्तु के साथ, परिस्थिति के साथ, संयोगों के साथ शत्रुता करता है। किसी के साथ वैर मत करो। मैं कहता चला आया हूँ कि आप लोगों का सत्संग करते-करते अध्यात्म में प्रवेश हुआ है। इसलिए आपका उत्तरदायित्व अधिक है। कथा सुननेवालों किसी के साथ बैर मत करो। वैष्णव-वैष्णव के साथ, भक्त-भक्त के साथ, श्रोता-श्रोता के साथ बैर न करें। कितना जीना है, किसके साथ वैर?

(२) विग्रह न करो : विग्रह कब होती है? जब तुममें आग्रह पैदा होता है। किसी वस्तु का आग्रह रखने पर विग्रह पैदा होता है। घर के सभी सम्मत हों कि आज उड़द की दाल बनानी है, तुम यह स्वीकार लो तो विग्रह नहीं होगी, किन्तु तुम आग्रह रखो कि आलू की शब्जी-तो तुरन्त ही विग्रह होगा। बहुत सरल गणित है। ऋषि ने उपनिषद् में जो कहा— वे बचन कुछ कठिन थे, तुम उसे सीधे ग्रहण नहीं कर सकते। दवा को शहद के साथ, पानी के साथ लेना पड़े। इसलिए मानस उपनिषद् ऋषि ने श्रीराम जी को प्रदान किया, कि तुम्हारे सिवाय मेरे कथन को सभी नहीं समझ सकते।

आग्रह छोड़ो। अहंकार को चोट लगेगी न? मैं घर का मालिक! मैं क्यों आग्रह छोड़ूँ? मैं क्यों इन लोगों की बात मानूँ। बस, यहीं से सभी उपाधियाँ प्रारम्भ हो जाती हैं। अनेक लोग मंत्र की माँग करते हैं? एक ही शब्द का मंत्र 'हाँ'

स्वीकार कर लो, तो कभी परेशानी नहीं होगी। घर में कुछ भी होता हो उसमें 'हा' कहो—

रहिमन रोष न कीजिए, कोई कहे क्या है?
हँसकर उत्तर दीजिए, हाँ, बाबा यूँ है॥

'हा' कहना सीखो तो जीवन कृतार्थ हो जायेगा। अब-पहले थोड़ा खतरा, बाद में प्रतीत होगा कि बहुत सरल है। जो भी घटना घटित हो 'हाँ' कहो। भोजन में जो वस्तु परोसी जाय तो कहो बराबर है। भोजन न मिले तो भी कहो अच्छा है। यह थोड़ा कठिन मालूम होगा। अनेक कहेंगे कि भोजन न मिले तो भी 'हाँ' कहें? भूखे मर जायँ? अरे, भोजन जो सभी को मिलता है, वे सब जीवित रहते हैं? भोजन करनेवाले भी मरते हैं और न करनेवाले भी। घर में 'हाँ' कहना सीख जाओ तो बहुत आनंद आएगा। कथा के पूर्व यह समय इसलिए ले रहा हूँ कि आप इस मानस उपनिषद् का अनुभव करें।

घर में सभी 'हाँ' मंत्र ले लें। बाद में तुम्हारे इष्ट देव अलग-अलग हों, तो उन्हें अलग रखो। एक 'हाँ' ही रखो।

(३) आस न त्रासा : जिसके जीवन में कोई आशा नहीं है—*'आशा शतैव बद्ध'*— एक साधक ने प्रश्न किया—संत दर्शन की आशा, भगवान की कथा में जाने की आशा, यात्रा जाने की आशा, यह सब बंधन नहीं माने जाते? आशा मात्र बंधन, इच्छा मात्र बंधन। हम जरा भी हिलनेवाले नहीं, किसी प्रकार की छूट नहीं, किन्तु भगवत्कथा सुननी, संत दर्शन की या तीर्थ में जाने की इच्छा यह वास्तव में इच्छा है आशा नहीं। प्यास लगी है, प्यास से कभी बंधन नहीं, वह तो *'दिने दिने नवं नवम्'*—एकबार पानी पी लिया, तीन घंटे के बाद फिर प्यास लगेगी। परिवार भी यदि कोई कहे कि एकबार तो कथा सुन ली अब क्या? उस समय कहना—यह आश नहीं है, जनम-जनम की प्यास है।

मुझसे कल एक गृहस्थ ने पूछा—मैं तीन जगह में फँस गया हूँ—मुझे तीर्थयात्रा जाना है, उसी समय यहाँ कथा का आयोजन है, कुटुम्ब की परेशानी भी मेरा मार्ग रोकती है, क्या करूँ?

मैं व्यक्तिगत अपना अभिप्राय देता हूँ शायद वह आपको पसंद आए या न आए? पहली बात तो यह है कि नगर में सत्संग की सरिता आई हो, भगवान राम की कथा, कृष्ण की कथा, भगवत्चरित गाना हो तो तुम्हें बाहर तीर्थ में जाने की जरूरत नहीं

है। गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी कहते हैं—

'जेहि दिन राम जनम श्रुति गावहिं,
तीरथ सकल तहाँ चलि आवहिं ॥' (बाल० ३३-६)

जहाँ राम कथा का गान होता हो, वहाँ समस्त तीर्थ निवास करते हैं। इसलिए नहीं कहता कि तुम जाओ, जिससे कथा में भीड़ कम हो। मुझे भीड़ के साथ कोई मतलब नहीं। एकबार कथा में एक महात्मा ने पूछा कि आप कथा करने के लिए जायें और गङ्गाजल गिर जाय तो? मैंने कहा—ऐसा नहीं होगा और यदि हुआ भी तो मेरा पूर्ण विश्वास है कि जहाँ राम कथा या कृष्ण कथा होती है, वहाँ गङ्गा, यमुना कूप में बहती है और ऐसा पानी पीकर मेरा व्रत भङ्ग नहीं होगा।

अब दूसरा प्रश्न—घर का कर्तव्य या कथा? विशेषतर तो कर्तव्य को महत्त्व दिया जायेगा, तुम्हें जरा उलटा लगेगा, किन्तु भगवत्कथा गाँव में हो रही हो—ध्यान देना, इसका अर्थ गलत मत करना। कर्तव्य महान ही है फिर भी जिस गाँव में सत्संग हो रहा हो, उस समय सत्संग को महत्त्व दो। तुम सत्संग में जाओगे, तो अपने कर्तव्य का पालन व्यवस्थित कर सकोगे। अपने बच्चों को सुसंस्कार दे सकोगे। जगत् में जो कुछ अच्छा हुआ है उसमें सत्संग ही है—

'सो जानब सतसंग प्रभाऊ,
लोकहुँ वेद न आन उपाऊँ' (बाल० २-६)

न तो वेद में कोई उपाय है और न तो लोक संस्कृति में। कथा में न जाओ। घर में रहोगे और तुम्हारी रुचि कथा में होगी, तो तुम्हारा मन कथा में नहीं लगेगा! तुम कर्तव्य व्यवस्थित नहीं कर सकते और तकरार तो होगी ही। तुम्हारा मन यदि कथा में लगा हुआ होगा और घर में कोई कहेगा कि कथा में क्यों दौड़ करते हो? घर में इतना काम है, कथा में क्या भगवान् मिल जायेंगे? ऐसा कहेंगे। तुम कथा में नहीं जाओगे तो घर में तुम्हारा मन नहीं लगेगा। मानसिक संघर्ष होगा अथवा पारिवारिक जनों के साथ विग्रह होगा। कर्तव्य के व्यवस्थित पालन के लिए सत्संग आवश्यक है। कर्तव्य का ज्ञान सत्संग से मिलता है। सत्संग करो बाद में मालूम होगा कि दूकान में क्या करना चाहिए? घर में किस प्रकार का व्यवहार करें। सत्संग का संक्षिप्त अर्थ न करो। एक बार सत्संग करे, उसके बाद अमुक लक्ष्य निश्चित करके व्यापारी व्यापार करे, तो यह उसका सत्संग। जो आता हो उस पर विचार करके चोरी किए बिना परीक्षा में लिखे यह छात्र का सत्संग। सरकारी कर्मचारी ऑफिस में ११ से ५ बजे तक काम

करे और रिश्वत न ले, तो यह सत्संग है। किसान ईमानदारी से अनाज पैदा करें, और जगत के तात का बिरुद रोशन करें, तो खेती उसका सत्संग। कारखानों में काम करनेवाला मजदूर प्रामाणिकता से काम करे, मालिक प्रामाणिक रूप से उसे वात्सल्य दे, बेंचकर सभी आनंद से रहें, यह है कारखाना का सत्संग। पत्नी-पति को आदर दे और पति-पत्नी की मर्यादा की रक्षा करे, तो यह उसका सत्संग। बालक माँ-बाप का अनुशासन माने और माँ-बाप बालक को समझें, देश-काल की रुचि के अनुसार तुम सत्संग में जाओ—

मति कीरति गति भूति भलाई,
जब जेहि जतन जहँ जेहि पाई॥
सो जानब सतसंग प्रभाऊ,
लोकहु वेद न आन उपाऊ। (बाल० २-६/५)

तो जिस नगर में कथा हो तो तीर्थ में जाने की जरुरत नहीं। तुम कहोगे कि आप सत्संग करते हैं इसलिए ऐसा कहते हैं। ध्यान देना! जो निम्न हैं, उसे श्रेष्ठ में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है, इसके विपरीत सत्य है। सूरतनगर में किसी ने पूछा, राजकीय क्षेत्र में धर्म का स्थान? मैंने कहा राजनीतिक क्षेत्र में धर्म तो होना ही चाहिए, किन्तु धर्म में राजकारण नहीं होना चाहिए। कारण कि धर्म श्रेष्ठ है, राजनीति वरिष्ठ है। सूरज अपनी किरणें सर्वत्र फैलाता है—झोपडी में भी और कीचड़ में भी-सिद्धान्त है।

राजनीति में धर्म होगा ही और धर्म अर्थात् सत्य, अहिंसा, परोपकार, परहित, सेवा भी, धर्म में राजनीति अयोग्य है। जबसे राजनीति आई है, उसी समय से यह बिगड़ा है। नीति से राज नहीं चल सकता। एक राजा ने आज्ञा दी कि भूदेवों को संध्या अनिवार्य रूप से करनी है। एक दिन देखने गया, एक भूदेव दिशा होकर आ रहा था। राजा को देखकर लोटे के पानी से संध्या करने लगा। राजा ने कहा— यह क्या? कहने लगा, यह कानूनी संध्या है।

भरत जी को प्रभु राजधर्म सिखाते हैं—राजधर्म हित सब मोही अर्थात् सत्संग को प्राधान्य दो। *'बिनु सतसंग विवेक न होई'*— बालक, युवान कथा सुनेंगे तो खिड़की के शीशे नहीं तोड़ेंगे, अध्यापकों को आदर देंगे। सत्संग कर्तव्य को शिक्षा देता है। संत दर्शन, सत्संग, तीर्थ की अपेक्षा यह इच्छा नहीं है, यह प्यास है, जो

कभी भी तृप्त नहीं होती—

'दरशन आश, प्रेम पियासी नयन हमारे।'

गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी कहते हैं कि भक्ति में प्यास और तृप्ति माननी पड़े, उसमें तृप्ति नहीं आती। ऐसी जिसकी आशा होगी, उसके लिए सब सुखमय। भगवान की प्यास जिसे लगती है, उसकी आँखों में आँसू आते हैं, ये सुखमय लगते हैं। किसी वस्तु के न मिलने पर आँसू आएँ यह दुःखमय है। कथा के समय तुम्हारी आँखों में आँसू आने पर तुम्हें अच्छा लगेगा। तुम गद्‌गद् हो जाओ यह सुखमय आँसू है। संसार में रोनेवाले दुःखमय आँसू।

'अनारंभ, अनिकेत, अमानी,
अनघ, अशेष, दच्छ विज्ञानी।'

अनारंभ : आरंभ से ही मुक्त। जो आरंभ से मुक्त होगा वह अंत तक मुक्त रहेगा। राम कथा का आरंभ कराया तो उसकी पूर्णाहुति भी होगी। मैं यहाँ आया तो यहाँ से वापस भी जाना पड़ेगा। गीता सर्वारंभ परित्याज्य की बात करती है। आरंभ मात्र करना है, किन्तु मैं जो करता हूँ उस भाव से नहीं। ध्यान देना— हमारा मूल स्वभाव अनारंभ है। हम ऐसा कह सकते हैं कि मेरा जन्म हुआ। जन्म तारीख कौन-सी? जिस दिन हमारा जन्म हुआ, उसके पूर्व हम माँ के गर्भ में थे. उसी समय से हमारा जन्म हुआ, यहाँ भी आरंभ नहीं है, इसके पूर्व हम अन्य स्थान पर थे।

पुनरपि जननम्, पुनरपि मरणं,
पुनरपि जननीजठरे शयनम्....

आरंभ कब हुआ यह ज्ञात नहीं। जो अनारंभ भाव को समझे, वह अंत भाव से मुक्त बने। एक महान संत थे, एक राजा से मिलने गये। राजा ने कहा मेरे पास बिलकुल समय नहीं है। बहुत ही संक्षिप्त उपदेश दीजिए, श्रेष्ठ मूल्यवान् बात कहिए। संत ने कहा—*'आप पैदा ही न होते।'* यह सुनकर राजा परेशान हो गया। तुम्हारा जन्म ही न हुआ होता। तुम जन्मे, इसी कारण यह सब झंझट हुआ। यह तो पहले नंबर की बात। दूसरे नंबर की मूल्यवान् बात-*'शीघ्र मर जा।'* भगवत् कथा सुनते-सुनते मरने के पहले मर जायें।

'मरने से पहले मरके हम भी चलेंगे बन में,
दुनिया दीवानी हो गई, हम भी चलेंगे बन में।

गंगा में स्नान करके, अपना ही ध्यान धरके,
मरने से पहले मरके हम भी चलेंगे बन में॥'

आरंभ में 'मैं' मिट जाय तो मनुष्य अनारंभ बन सकता है।

अनिकेत : जिसके पास कोई घर नहीं है, स्थायी निवास नहीं है। वास्तव में हमारा कोई घर नहीं है। इसके पूर्व किसी दूसरे के घर में, किसी प्राणी या पशु के शरीर में, मालूम नहीं कहाँ-कहाँ जन्म लिया होगा? घर का निर्माण तो करना ही है, उसमें सभी को बसाना भी है, किन्तु स्टेशन के वेटिंग रूम में बैठा हुआ मनुष्य अपना बिस्तर न खोले, कि न जाने कब ट्रेन आयेगी और जाना पड़ेगा। इस प्रकार बिस्तर बाँधकर जो तैयार रहता है कि कब तक मौत आयेगी—इस भाव से जो रहता है वह अनिकेत।

अमानी : जो अपने जीवन में अमानी है। मान जिसे पीड़ा देता है। जो यह समझे कि मुझे जो मान मिलता है, वह योग्य नहीं, कारण कि यह मान अन्य किसी दूसरी शक्ति के लिए है।

अनघ : जो पाप से मुक्त है। पाप? शास्त्र जिसे न कहे उसे तुम करो यह पाप है। जो खाने, पीने, देखने की न कहे फिर भी तुम करो, यह पाप है और शास्त्र जो हलका, निम्न होता है उसी के प्रति ना कहता है। अतः पाप हलका और निम्न है।

छः महीने का बालक हो, घर में चोर आए और बालक रुदन करने लगे तो चोर भागने लगेंगे। कहाँ गई चोर की शूरवीरता? छः महीने के बालक के रूदन से भागे। इसी कारण पाप सदैव हलका और निम्न ही है।

अरोष : जिसे कोई रोष नहीं, क्रोध नहीं, जो हो रहा है वह ठीक है।

दच्छ : दक्ष का अर्थ चतुराई नहीं। चतुराई और लुच्चाई में ज्यादा अंतर नहीं है। काका, मामा की पुत्रियाँ, दक्ष अर्थात् समझदारी, सयानापन, भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—

'अनपेक्षः शुचिर्दक्षः उदासीनो गतव्यथः'

जो अपनी भूल को स्वीकार कर लेता है, वह दक्ष है। जो चालाक होगा, वह भूल स्वीकार नहीं करेगा, दूसरी वार भी वही भूल करेगा। समझाने का प्रयत्न करेगा, यह भुल नहीं, मैं बराबर समझकर, जानकर किया है। अपना प्रभाव दूसरों पर डालता है। दक्ष चालाकी नहीं करता। दो व्यक्ति नौकाविहार कर रहे थे। एक व्यक्ति दुसरे से ५००/- रुपये मागता था, दूसरे के पास व्यवस्था थी, फिर भी उसे

पैसे देता नहीं था। एक चोर भी नौका में था। मझधार में नौका आई उस चोर ने कहा कि जिसके पास जो हो वह निकाल दो। दूसरे ने ५००/- रुपये निकालकर अपने साथी को दे दिया कि, लो, तुम्हारा ऋण चुकते। इसको चालाकी कहते हैं।

संसार में प्रवेश करके संसार प्राप्त करो यह है चालाकी। परमात्मा में प्रवेशकर परमात्मा को प्राप्त करो यह है दक्षता। विज्ञान अनुभव करके प्रयोग करके सिद्ध करते हैं।

H_2O अर्थात् पानी। प्रयोगशाला में वायुओं को एकत्रित करके पानी बनाना। शास्त्रों के सिद्धान्तों को अनुभव द्वारा जो सिद्ध करे वह हैवज्ञानी। वाल्मीकि और हनुमान जी को गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी ने विज्ञानी कहा है—*'ज्ञानी ते मोहिं अति प्रिय विज्ञानी'* ज्ञानी की अपेक्षा मुझे विज्ञानी विशेष प्रिय है। जो वैर न करे, विग्रह न करे, जिसे आशा न हो, किन्तु परमात्मा की प्यास हो, जो अनारंभ, अनिकेत भाववाला हो, जिसका जीवन निष्पाप अरोष, जो दक्ष और विज्ञानी हो, उसके वश में मैं रहता हूँ।

इसमें क्या नहीं करना चाहिए यह बताया है और क्या करना चाहिए? प्रभुने सुन्दर शब्दों का प्रयोग किया है—यह करो—

'प्रीति सदा सज्जन संसर्गा'

सज्जन का संग करो, उसमें प्रीति रखो।

'तृण सम विषय स्वर्ग अपवर्गा'-

सज्जन संसर्ग क्यों? साधु संसर्ग क्यों नहीं? प्रथम भगति संतन्ह कर संगा। किन्तु श्रीतुलसीदास जी ने भविष्य का विचार करके कहा है कि अनेकवार साधु के वेश में तुम्हें कोई धोखा दे जाय, दगा करे। अतः 'सज्जन' शब्द का प्रयोग किया है।

प्रवनऊँ प्रथम महीसुर चरना,
मोहजनित शंसय सब हरना।
सुजन समाज सकल गुन खानी। (बाल० १-२)

बाद में सज्जनों की वंदना की, जिसके अंतर बाह्य में सज्जनता है। साधु का संग न करो, ऐसा नहीं है। दुःसंग (कुसंग) सर्वथा त्याज्य है। जो तुम्हारी निष्ठा को बिगाड़े, श्रद्धा में विघ्न डाले, भजन में विघ्न डाले तुम्हारे में तर्क पैदा करे, यह तुम्हारे लिए सत्संग नहीं है। मैं वही प्रसाद ले सकता हूँ जिससे मेरे ठाकुर को भोग लगाया जा सके।

'तृण सम विषय स्वर्ग अपवर्गा'—तृण की भाँति जिसके विषय स्वर्ग और मुक्ति

छूट जाय। पहले सत्संग करो। बाद में इन तीनों की चर्चायें। कारण कि सत्संग करने से ये तीनों अपने आप छूट जाते हैं।

तुम्हें सत्संग से सुख मिलता होगा, तभी दूकान छोड़कर यहाँ बैठे हो। मुझे अच्छा लगे, इसलिए नहीं, सीदी-सादी बात है—विषय का सुख सत्संग के सुख की अपेक्षा गौण है। उच्च व्यक्तियों के लिए स्वर्ग का सुख भी गौण है और उससे उत्तम को मुक्ति भी गौण मालूम होगी।

अनारंभ, अनिकेत यह सब प्रभु आपने कहा— किन्तु इसमें कुछ ठोस कहो— अनुशासन की बात की। ऊपर में तो हम छूट करेंगे कि इतना ही होगा... इससे मजबूत रीति से कहा कि यह तो करो ही... क्या?

'भगति षच्छ हठ नहि शठताई,
दुष्ठ तर्क सब दूरि बहाई।' (उत्तर० ४५-८)

परमात्मा के श्रीमुख का यह वाक्य है—'भक्ति' को हठ से पकड़ो। 'हठ' लिखा है। कुछ भी हो जाय, किन्तु छोड़ो नहीं। ध्यान देना-शठता नहीं आनी चाहिए। हठ अवश्य करो किन्तु लुच्चाई नहीं। लुच्चाई करके दूसरे का खंडन न करो, दुष्ट तर्क फेंक दो। यह तुम्हारी बुद्धि का सर्जन है। अपनी भक्ति अव्यभिचारिणी बनाओ। नितांत मजबूती से पकड़ा सो पकड़ा—

'जो हर दर पर झुके,
उसको सर नहीं कहते।'

एक को पकड़ो *'और देवता चित्त न धरई'* सभी का आदर करो, तुम कहीं वेदान्त, अष्टावक्री सुनो अर्थात् भक्ति छोड़ दो, राम नाम लेना छोड़ दो, ऐसा नहीं। तुम जिस प्रकार की भक्ति करते हो उसे मजबूती से पकड़ो।

एक भाई ने कहा—बापू, मैं इस समय अष्टावक्री सुनता हूँ सब असंग है, यह सब गलत है। मैंने कहा—तू तीन महीने के बाद मिलना। मिला-पूछा-अष्टावक्री कैसी है? कहने लगा—मैंने धंधा-दुकान शुरु कर दी है। मैंने कहा—सब छोड़ कर यही कर। अष्टावक्र को पचाना कठिन है। इस प्रकार असंग नहीं बना जा सकता। अनुभव में उतारना पड़ता है। क्या तूने रामायण का पारायण छोड़ दिया?... तो अपने भक्ति पक्ष को हठ से पकड़े रहो, किन्तु सठता से नहीं। हमीं सच्चे हैं, ऐसी सठता नहीं रखो। हमें अपना ही पकड़े रखना है। शेष जो भी करना है करते रहो, दुष्ट तर्कों को छोड़ दो।

परम् पूज्य रामानन्दाचार्यपीठ सिंहासनाशीन

१००८ श्री रामाचार्य जी महाराज के श्री चरणो में

पुजारी - केदारदास वैष्णव का सादर दण्डवत प्रणाम अर्ज है।

आपकी सेवा में दि. ९ अगस्त को श्रद्धेय श्री. के. सी. वैष्णव सा. के साथ उपस्थित होने का अवसर मिला जिसको मैं अपना सौभाग्य मानता हूँ

आपने मेरी पुत्री के लिए P.H.D करने हेतु रामानन्द सम्प्रदाय का अनुपम साहित्य प्रदान किया इसके लिए मैं आपका सदैव आभारी रहूँगा। आपके यहाँ स्थापित साहित्य भण्डार को देखकर मुझे अतीव प्रसन्नता हुई। मैं साहित्य प्रेमी हूँ। सौभाग्य से मुझे हिन्दी और संस्कृत में M.A करने का अवसर मिला।

मेरी पुत्री भी M.A M.Ed है उसको भी साहित्य में रूचि है। इसलिए हमारे ट्रस्ट में एक बड़ा पुस्तकालय बन गया है रामानन्द सम्प्रदाय का साहित्य जुड़जाने से पुस्तकालय का स्तर बढ गया है।

(१) हमारा विनम्र निवेदन है कि आपके प्रकाशित एवं स्थापित साहित्य में से एक - एक पुस्तक हमारे पुस्तकालय को मिल जाती तो हमें पुस्तकालय से समाज को और अधिक लाभ पहुँचाने का अवसर मिलता और आपकी कीर्ति बढती यदि आदेश प्रदान करें तो मैं एक-२ दिन के आकर आपके पुस्तकालय को क्रमबद्ध जमाने में सहयोग करूँगा तथा हमारे लिए कुछ आवश्यक शेष पुस्तके ला पाऊँगा।

(२) आपने ९ अगस्त को भेंट के अवसर पर रामानन्दाचार्य पीठ मासिक पत्रिका प्रदान की थी और साथ ही आदेश दिया था कि आपकी पत्रिका के लिए कुछ लिख भेजता रहूँ। तदनुसार दो लेख क्रमशः (१) गुरूबिन ज्ञान नही रै (२)'गुरू गीता है साधक संजीवना' लिखकर भेज रहा हूँ। यदि आपको मेरी लेख और लेखन शैली पसन्द आवे तो आगे भी लेख व कविताऐं भेजता रहूँगा। अभी हमारे लेख और कविताऐ वैष्णव समाज की पत्रिकाओ में छप रही है। प्रतिमाह २-३ कविताऐं और लेखों की नवीन रचनाऐं लिखता रहता हूँ। आशा है आशीर्वाद प्रदान करेंगे।

मेरा घर चित्तौड़गढ़-भीतवाड़ा के बीच फोर लाइन पर ही बना हुआ है, कभी इधर पधारना हो तो दर्शन का सौभाग्य प्रदान करावें। हमारे पुस्तकालय के लिए साहित्य प्रदान करने एवं (२) आपकी पत्रिका के लिए रचनाए लिखने के आदेश की प्रतीक्षा में।

आपका ही कृपा पात्र

भारतसमाचारपत्र रजि. नं. 33453 / 79 G.A.M.C. 451/2009-11 प्रत्येक मास की ५ वीं तारीख को अहमदाबाद
पी. एस. ओ. पोस्टिंग एवं 31-12-2011 तक मान्य | मासिक शुल्क रु ६ वार्षिक शुल्क रु ६०

न वा उ देवाः क्षुधमिद्वधंददु-
रुताशितमुप गच्छन्ति मृत्यवः ।
उतो-रयिः पृणतो नोप दस्य
त्युतापृणन्मर्डितारं न विन्दते ॥ १ ॥

1. (किये हुओ पापों के) दण्ड के रूप में देवों ने क्षुधादंड का विधान नहीं किया है। (क्योंकि) मृत्यु तो खाने वालों को भी प्राप्त होती हैं। (दान करने से) दाता की संपत्ति घटती नहीं, अदाता के साथ कोई सहानुभूति दिखाने वाला नहीं होता। देवों ने जो भूख की सृष्टि की है वह प्राणनाशिनी ही है । क्योंकि अन्न खाने वालों को भी मृत्यु प्राप्त होती है। यह अन्नवान् को सोचना चाहिए । कुछ समय तक प्राण रक्षक अन्न से मोह नहीं करना चाहिए।

– सम्पादक –
जगद्गुरुश्री स्वामीश्रीरामाचार्य
स० सम्पा०– पं० श्रीशरच्चन्द्र शास्त्रीजी
व्यवस्थापक –
म० मं० स्वामीश्रीरामावतारदासजी रत्न
कार्यालय :
जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्यपीठ,
पालड़ी, अहमदाबाद-३८०००७.
फोन : २६६०१००१
प्रकाशक : जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्यश्रीरामाचार्यजी
प्रकाशकीय मालिकी : श्रीशेषमठ–शींगडा
प्रकाशन स्थल :
श्रीकोसलेन्द्रमठ, पो. पालडी, सरखेज रोड, अहमदाबाद-७
टाईप सेटींग :
श्री आनन्दभाष्य मुद्रणालय, श्रीकोसलेन्द्रमठ
पो. पालडी, अहमदाबाद-७
मुद्रण स्थल :
श्रीरामानन्द ऑफसेट अहमदाबाद–२२.
मो. : 9824053772
Internet 1 www.Shriramanandasampraday. org
जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्य श्रीरामाचार्यजी के द्वारा श्रीरामानन्द दर्शन शोध संस्थान के धर्मप्रचारार्थ प्रकाशित एवं वितरित

If Undelivered Return to :
कार्यालय : जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्यपीठ,
पालड़ी, अहमदाबाद-३८०००७.

सेवा में

६०६ पुस्तकालय
वाल्मीकि अध्ययन संस्थान
काठमाण्डु (नेपाल)